फेलिंग द फॉरेस्ट

यह आलेख सामान्य अध्ययन प्रश्न-I (सामाजिक सशक्तिकरण), II (शासन व्यवस्था), III (संरक्षण)

द हिन्दू

लेखक- बहार दत्त (पर्यावरण पत्रकार)

4 मार्च, 2019

"देखा जाये, तो मानवाधिकार समूहों और वन्यजीव अधिकार समूहों दोनों ने वन अधिकार अधिनियम का संरक्षण उपकरण के रूप में उपयोग नहीं किया है।"

अभी हाल ही में 13 फरवरी को सुप्रीम कोर्ट ने 17 राज्यों में वनभूमि से 10 लाख से अधिक आदिवासियों और अन्य वनवासियों को बेदखल करने का आदेश दिया था। याचिकाकर्त्ताओं, जिसमें मुख्य रूप से वन्यजीव गैर-सरकारी संगठन शामिल थे, ने मांग की थी कि राज्य सरकारें उन वनवासियों को बेदखल करती हैं, जो अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006 के तहत पारंपरिक वनभूमि पर अपना दावा सिद्ध करते हैं, जिसे वन अधिकार अधिनियम (एफआरए) के रूप में जाना जाता है, लेकिन सुप्रीम कोर्ट ने इनकी याचिका को खारिज कर दिया। हालांकि, इसके बाद 28 फरवरी को अदालत ने अपने विवादास्पद आदेश पर रोक लगा दी और राज्य सरकारों को निर्देश दिया कि वे वनवासियों के दावे अस्वीकार करने के लिए अपनायी गई प्रक्रिया के विवरण के साथ हलफनामे कोर्ट में दाखिल करें।

इसके अलावा, सर्वोच्च न्यायालय ने अब यह स्पष्ट कर दिया है कि कोई जबरन निष्कासन नहीं होगा। अदालत में गए वन्यजीव समूहों का तर्क है कि एफआरए के कार्यान्वयन से अतिक्रमण और मानव आवासों के लिए वनभूमि की नई निकासी हो सकती है। मानवाधिकार समूहों ने तर्क दिया है कि एफआरए संसद द्वारा पारित किया गया था और इसका उद्देश्य पारंपरिक वनवासियों पर हो रहे अन्याय को ठीक करना है, जो औपनिवेशिक काल से निष्कासन के चक्र के अधीन हैं। औपनिवेशिक काल के बाद से, जैसा कि सरकारों ने जंगलों पर अपना नियंत्रण स्थापित किया, भारत का वन इतिहास वनवासियों की बेदखली और वनवासियों द्वारा विद्रोह का एक चक्र बन गया है।

एक मूलभूत अंतर

अब हम जानेंगे कि असल समस्या क्या है? दोनों समूह इस वैचारिक बहस (चाहे वह अदालत हो या सोशल मीडिया) में इतना उलझ गये हैं कि वे अपने संबंधित हित समूहों के लिए संभावित रूप से लाभकारी परिणामों पर ध्यान भी नहीं दे पा रहे हैं। एफआरए वनवासियों के लिए था, लेकिन यह संरक्षण का एक शक्तिशाली साधन भी हो सकता था। अफसोस की बात है कि दोनों पक्षों ने अपने लिए समर्थन हासिल करने के लिए गलत सूचना का प्रचार किया है।

पहला तथ्य यह है कि जब किसी वनवासी/आदिवासी को जमीन के एक टुकड़े पर अधिकार की मान्यता दी जाती है, तो इसका मतलब यह नहीं हुआ कि वह उस क्षेत्र के सभी पेड़ों को काट देगा। यह अक्सर दो समूहों के बीच असंगति का सबसे मजबूत तथ्य है, जिसका निहितार्थ यह है कि वनभूमि पर अधिकार को पहचानना उस जंगल को साफ करने जैसा है। इसलिए यह तर्क देना कि अधिनियम के माध्यम से लाखों वनवासियों के अधिकारों को मान्यता दी गई है, तो इसका मतलब यह नहीं हुआ कि उन्हें वन को विभाजित करने का अधिकार भी मिल गया है। दूसरी ओर, जब खनन या राजमार्गों या सड़कों जैसी बड़ी विकास परियोजनाओं के लिए वनभूमि का इस्तेमाल किया जाता है, तो यह खुद-ब-खुद स्पष्ट हो जाता है।

वास्तव में सर्वोच्च न्यायालय ने 2013 में इस संदर्भ में समानता का मार्ग प्रशस्त किया था, जहाँ इसने ग्राम सभा को यह निर्णय लेने का अधिकार दिया कि ओडिशा की नियामगिरी हिल्स में वेदांत समूह की 1.7 बिलियन डॉलर की बॉक्साइट खनन परियोजना आगे बढ़ सकती है या नहीं। इस प्रकार इसने एफआरए के तहत रायगड़ा और कालाहांडी की ग्राम सभाओं को भी निर्णय लेने की शक्ति प्रदान की थी। सभी 12 ग्राम सभाओं ने सर्वसम्मति से पहाड़ियों में खनन को अस्वीकार कर दिया।

2016 में, फिर से, यह एफआरए ही था जिसे नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल (एनजीटी) द्वारा लागू किया गया था, जब हिमाचल प्रदेश के लिप्पा के लोगों को यह तय करने की शक्तियां प्रदान की गई थीं कि वे इस क्षेत्र में एक हाइडल पावर प्रोजेक्ट चाहते हैं या नहीं। क्योंकि इस परियोजना के कारण वनभूमि जलमग्न हो जाती और नदी में भारी जल जमाव हो जाता।

जब वन्यजीव समूह उन हजारों 'फर्जी दावों' की ओर इशारा करते हैं, जो दायर किए जा रहे हैं और जिन्हें खारिज किया जाना चाहिए, तो किसी का ध्यान इस बात पर नहीं गया कि राज्य वास्तव में वन क्षेत्रों में लोगों के अधिकारों को मान्यता देने के लिए उत्सुक नहीं होते हैं (भले ही इनसे उन्हें वोट मिल सकते हैं) क्योंकि ये बड़ी परियोजनाओं के लिए कठिन साबित होते हैं। एक मामला निर्माणाधीन मैपीथेल बांध का है, जो मणिपुर में स्थित है। एक बार चालू होने के बाद, यह 1,215 हेक्टेयर (हेक्टेयर) भूमि को डुबो देगा, जिनमें से 595 हेक्टेयर जंगल कवर के तहत है। 2015 में, एनजीटी ने राज्य से परियोजना के लिए वन मंजूरी लेने को कहा था। हालांकि, वन मंजूरी प्राप्त करने के लिए, राज्य सरकार को यह साबित करना होगा कि जनजातीय लोगों और वनवासियों के अधिकारों को प्रभावित नहीं किया

जाएगा। लेकिन, राज्य सरकार बांध बनाने की इतनी इच्छुक थी कि इन्होंने वहां रहने वाले लोगों के अधिकारों को नजर अंदाज कर दिया। ऐसे सैकड़ों मामले सामने आए हैं, जिसने इन दोनों अलग-अलग समूहों को पर्यावरण और समुदायों के लिए एक साथ आने का अवसर प्रदान किया है। अब सवाल यह उठता है कि क्या दोनों समूह अपनी-अपनी तलवारों को नीचे रखकर अपनी शक्तियों का उपयोग उस लड़ाई से लड़ने के लिए कर सकते हैं, जिसे लड़ने की जरूरत है?

ऐतिहासिक अन्याय को ठीक करना

मानवाधिकार समूहों को भी दोषमुक्त नहीं रखा जा सकता है। इनमें से कईयों ने न्यायपालिका के कदम रखते ही जवाब देने में जल्दीबाजी दिखाई है, लेकिन यही समूह जब ग्राम सभाओं के साथ काम करने और वास्तविक दावों को दर्ज करने के संदर्भ में धीमे पड़ जाते हैं। वहीं मानवाधिकार समूह उन मामलों में लड़ने के लिए आगे नहीं आए है, जो संरक्षण के साथ-साथ उन क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की मद्द कर सकते थे। इसलिए यह कहना गलत नहीं होगा कि दोनों समूहों ने जंगल को विफल कर दिया है लेकिन एफआरए के माध्यम से भारत उस उद्देश्य को प्राप्त करने में अभी भी सक्षम है।

GS World टीम...

अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वन निवासी (अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006

चर्चा में क्यों?

- सुप्रीम कोर्ट ने आदेश दिया है कि खुद को जंगल का निवासी सिद्ध करने में विफल रहे अवैध कब्जेदारों को जंगलों से बेदखल किया जाए।
- सुप्रीम कोर्ट के इस आदेश से देशभर में करीब 10 लाख लोगों को जंगल खाली करना पड़ सकता है।
- इन निवासियों को 'अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006 के तहत अपने दावे सिद्ध करने थे।
- वन भूमि पर सबसे ज्यादा अतिक्रमण मध्य प्रदेश और ओडिशा के जंगलों में है, जहां क्रमशः साढ़े तीन लाख और डेढ़ लाख लोगों के वनाधिकार दावे खारिज हुए हैं।

क्या है?

- वनों में रहने वाले कई आदिवासी परिवारों की विषम जीवन स्थिति को दूर करने के लिए अनुसूचित जाति एवं अन्य पारंपरिक वन निवासी अधिनियम, 2006 का ऐतिहासिक कानून अमल में लाया गया है।
- इस कानून को, जंगलों में रहने वाले अनुसूचित जातियों एवं अन्य पारंपरिक वन निवासियों को उनका वाजिब अधिकार दिलाने के लिए, जो पीढ़ियों से जंगलों में रह रहे हैं लेकिन जिन्हें वन अधिकारों तथा वन भूमि में आजीविका से वंचित रखा गया है, लागू किया गया है।
- इसकी धारा-3 (1)(एच) के अंतर्गत अनुसूचित जनजाति एवं अन्य पारंपरिक वन क्षेत्र निवासियों (वन अधिकार मान्यता) अधिनियम, 2006 के तहत वन्य गांव, पुराने आबादी वाले क्षेत्रों, बिना सर्वेक्षण वाले गांव तथा वन क्षेत्र के अन्य गांव, भले ही वह राजस्व गांव के रूप में अधिसूचित हों या नहीं हों, इनके स्थापन एवं परिवर्तन का अधिकार यहां रहने वाले सभी अनुसूचित जनजातियों एवं अन्य पारंपरिक वन निवासियों को प्राप्त है।

वन अधिकार अधिनियम, 2006

क्या है?

- वन अधिकार अधिनियम (2006), वन संबंधी नियमों का एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है, जो 18 दिसम्बर, 2006 को पास हुआ था।
- यह कानून जंगलों में रह रहे लोगों के भूमि तथा प्राकृतिक संसाधनों पर अधिकार से जुड़ा हुआ है, जिन्हें औपनिवेशिक काल से ही वंचित किया हुआ था।
- इसका उद्देश्य जहां एक ओर वन संरक्षण है, वहीं दूसरी ओर यह जंगलों में रहने वाले लोगों को उनके साथ सदियों तक हुए अन्याय की भरपाई का भी प्रयास करता है।

इस कानून के मुख्य प्रावधान निम्नलिखित हैं:-

- यह जंगलों में निवास करने वाले या वनों पर अपनी आजीविका के लिए निर्भर अनुसूचित जनजातियों के अधिकारों की रक्षा करता है।
- जंगलों में रहने वाले लोगों तथा जनजातियों को, उनके द्वारा उपयोग की जा रही भूमि पर उनको अधिकार प्रदान करता है।
- उन्हें पशु चराने तथा जल संसाधनों के प्रयोग का अधिकार देता है।
- विस्थापन की स्थिति में उनके पुनर्स्थापन का प्रावधान करता है।
- जंगल प्रबंधन में स्थानीय भागीदारी सुनिश्चित करता है।
- जंगल में रह रहे लोगों का विस्थापन केवल वन्यजीवन संरक्षण के उद्देश्य के लिए ही किया जा सकता है। यह भी स्थानीय समुदाय की सहमति पर आधारित होना चाहिए।
- वन संरक्षण अधिनियम (2006) स्थानीय लोगों को भूमि पर अधिकार प्रदान कर वन संरक्षण को बढ़ावा देता है।
- यह वन भूमि पर गैर-कानूनी कब्जों को रोकता है तथा वन संरक्षण के लिए स्थानीय लोगों के विस्थापन को अंतिम विकल्प मानता है। विस्थापन की स्थिति में यह लोगों के पुनर्स्थापन का अधिकार भी प्रदान करता है।

संभावित प्रश्न (प्रारंभिक परीक्षा)

1. वन अधिकार अधिनियम (2006) के सन्दर्भ में निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए:-

1. यह अधिनियम स्थानीय लोगों को भूमि पर अधिकार प्रदान कर वन संरक्षण को बढ़ावा देता है।
2. हाल ही में आंकड़ों के अनुसार सबसे ज्यादा अतिक्रमण क्रमशः असम एवं अरूणाचल प्रदेश के जंगलों में है।
3. हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने सभी राज्यों की वनभूमि से 10 लाख से अधिक आदिवासियों और वनवासियों को बेदखल करने का आदेश दिया है।
4. उपरोक्त निर्णय सुप्रीम कोर्ट ने भारत सरकार की एक याचिका पर सुनवाई करते हुए दिया है।

उपर्युक्त में से कौन-से कथन असत्य हैं?

(a) 2, 3 और 4
(b) 3 और 4
(c) 1, 3 और 4
(d) उपरोक्त सभी

1. Consider the following statements in the context of Forest Right Act (2006):-

1. This act encourage the forest conservation by providing right on land to local people.
2. According to the latest data, maximum encroachment is in the Assam and Arunachal Pradesh respectively.
3. Recently the Supreme Court ordered to evict more than 10 lakh tribals and forest dwellers from the forest land of all states.
4. The above decision is given by Supreme Court after a hearing on a petition of government of India.

Which of the above statements are incorrect?

(a) 2, 3 and 4
(b) 3 and 4
(c) 1, 3 and 4
(d) All of the above.

संभावित प्रश्न (मुख्य परीक्षा)

प्रश्न: वन अधिकार अधिनियम (2006) आदिवासियों/वनवासियों को संरक्षण प्रदान करता है। हाल ही में आया सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय इनको कैसे प्रभावित करेगा? स्पष्ट कीजिए।

Q. Forest Right Act (2006) provides the protection to Tribals /Forest dwellers. How will the recent verdict of Supreme Court will affect it? Explain.

.

(250 Words)

नोट : 2 मार्च को दिए गए प्रारंभिक परीक्षा (संभावित प्रश्न) का उत्तर 1(b) 2, (a) होगा।